प्रसंगशः

आलोक मेहता

# गलत चौकड़ी कर सकती है बर्बाद

## इमरजेंसी से भी सबक नहीं लिया किसी सत्ताधारी ने, सलाहकार बिगाड़ते रहे छवि

पच्चीस जून, 1975 की रात इंदिरा गांधी के कानूनी सलाहकार और कांग्रेसी मुख्यमंत्री सिद्धार्थ शंकर रे तथा दूसरे बड़े कांग्रेसी सहयोगी डी.ए. पई ने हड़बड़ी में इमरजेंसी लगाने की सलाह दी तथा स्वयं जाकर तत्कालीन राष्ट्रपति फखरुद्दीन आली अहमद से आपातकाल की घोषणा की अधिसूचना पर हस्ताक्षर करवा लिए। तेरह दिन पहले ही इंदिरा गांधी के नजदीकी सलाहकार डी.पी. धर का निधन हुआ था। भ्रष्टाचार के मुद्दे पर 'चिमन चोर' के नारों की गूंज से गुजरात विधानसभा चुनाव में कांग्रेस को करारी पराजय मिली थी और उसी दिन इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने तकनीकी आधार पर श्रीमती गांधी का निर्वाचन अवैध करार दिया था। ऐसे तनाव के क्षणों में उन सलाहकारों ने सलाह दी जो वकील भले ही थे, संविधान विशेषज्ञ नहीं और प्रजातांत्रिक तरीकों के बजाय दमन को सही मानते थे। गांधी और नेहरू की छाया में पली इंदिरा गांधी तानाशाह नहीं बन सकती थीं। यह 1975 के गलत निर्णय को डेढ़ साल से अधिक समय तक नहीं पचा सकीं और उन्होंने इमरजेंसी हटाकर आम चुनाव करवा दिए। तब भी भारत की गुप्तचर एजेंसियों के चापलूस अधिकारी यही राग अलाप रहे थे कि चुनाव में कांग्रेस की भारी जीत होगी। यह राय भी गलत साबित हुई।

इक्कीस साल बाद राजनीति के उस काले अध्याय के साथ बहुत से नीले, पीले, लाल अध्याय जुड़ गए लेकिन लगता नहीं कि सत्ता से जुड़े रहने वाले राजनीतिक दलों के नेताओं ने खतरनाक सलाह देने वाली चंडाल चौकड़ियों से बच सकने में सफलता पाई है। इमरजेंसी के बाद जनता पार्टी आई तो गांधीवादी मोरारजी देसाई तक अपने चालाक पुत्र कांति देसाई और सुब्रह्मण्यम स्वामी जैसे सलाहकारों के कारण अपनों पर ही तलवार चलाते रहे। उनकी पालकी उठाने वाले भारतीय जनसंघ की पृष्ठभूमि वाले नेताओं ने भी जॉर्ज फर्नांडीस जैसे अस्थिर, खाड़कू और अति महत्वाकांक्षी या सत्तालोलुप भ्रष्ट नेताओं को सिर चढ़ाया। जनसंघ की पृष्ठभूमि वाले एक मंत्री ने पहाड़ी तिमाही में ही अपने विश्वस्त सहयोगी की सलाह पर चेक से रिश्वत ले ली तो तातीरात उसका मंत्रालय बदला गया। जनता पार्टी राज में सूचना-प्रसारण मंत्री बनने वाले लालकृष्ण आडवाणी के पत्रकारों से बहुत अच्छे रिश्ते थे लेकिन उनके एक सहयोगी ने 'नमक-मिर्च' लगाकर निरंतर उन्हें कई सुलझे हुए संपादकों-पत्रकारों से इस आधार पर दूर रखा कि वे संघ की पृष्ठभूमि वाले नहीं थे। यह सिलसिला एनडीए राज तक चलता रहा। हां, जब आडवाणी खुद निर्णय लेते रहे, आलोचक भी उनके साथ जुड़े रहे। मुझे यह तो नहीं पता कि उन्होंने सत्ता में रहते हुए स्वयं किसी पत्रकार को नौकरी से निकलवाया, लेकिन हां जनता पार्टी के राज में मोरारजीभाई या भाजपा गठबंधन राज में अटल बिहारी वाजपेयी के सलाहकारों ने 'इंडिया शाइनिंग' के ढोल बजाते हुए प्रबंधकों पर दबाव डालकर कई संपादकों और पत्रकारों को नौकरियों से निकलवाया। राहुल महाजन के साथ शराब और कुछ अन्य मादक पदार्थों का सेवन करते एक सचिव की दुःखद मृत्यु पर भाजपा सकते में आई लेकिन भाजपा राज में उनके प्रधानमंत्री के सबसे बड़े सलाहकार विदेश यात्रा पर रवाना होते ही सुबह 10 बजे से जिस तरह नीट व्हिस्की (बिना सोडा-पानी के शराब) पीकर अंट-शंट धमकियां देते रहते थे, उस पर सत्ताधारियों ने कभी अंकुश नहीं लगाया। सवाल शराब का नहीं, सत्ता के नशे में चूर होकर दी जाने वाली गलत सलाह का रहा है। दो पीढ़ियों में जमीन-आसमान का अंतर था। कभी द्वारका प्रसाद मिश्र इंदिरा गांधी के सलाहकार माने जाते थे और उन्होंने हमेशा सही और कड़वी सलाह दी। अटल उनके संपर्क में तब भी थे और बाद में भी रहे लेकिन प्रधानमंत्री बनने पर उन्होंने राजनीतिक सलाह के लिए घोर गैर राजनीतिक और तानाशाही मानसिकता वाले सलाहकार रखे जिन्होंने न केवल अपनों को दुश्मन बनवाया, पूरी भाजपा को नैया डुबवा दी।

भारत के राजनीतिक सलाहकारों के काले कारनामों पर पचासों अध्याय लिखे जा सकते हैं। यह सलाहकार परंपरा अमेरिकी देन है। वहां राष्ट्रपति सीधे जनता से जुड़ा रहता है लेकिन भारत में नेहरू-शास्त्री और प्रारंभिक वर्षों में इंदिरा गांधी तक तो जनता से जीवंत संपर्क का सिलसिला रहा, फिर सलाहकार चौकड़ियां सत्ताधारियों को गलत रास्ते पर भटकाती रहीं। तब चाहे विश्वनाथ प्रताप सिंह रहे हों या चंद्रशेखर या इंदर कुमार गुजराल, देवेगौड़ा या नरसिंह राव। सबके इर्द-गिर्द रहने वाली सलाहकार मंडलियां विनाश के दरवाजे खोलती रहीं। वी.पी. सिंह को अब बीस साल बाद समझ में आया कि बोफोर्स तोप खरीदी में दलाली खाने के लिए राजीव गांधी पर आरोप लगाना गलत था। उस समय तो वह कुख्यात तांत्रिक के इशारे पर एक जाली पर्ची जेब में रखकर सभाओं में हांकते रहे कि बोफोर्स कांड के पैसे जिस बैंक खाते में जमा हैं, उसका नंबर उनकी जेब में है। तांत्रिक की दी हुई वह पर्ची हवा में गायब हो गई। इसी तरह उन्हें सत्ता में लाने वाले सलाहकार कमंडलधारियों ने मंझधार में उन्हें डूबने के लिए त्याग दिया। गांधी और जयप्रकाश नारायण को माला जपने वाले युवा तुर्क चंद्रशेखर ने सत्ता में आने पर ऐसे राजनीतिक सलाहकारों को मंत्री पद दिए जिन्होंने न केवल भ्रष्टाचार के रिकॉर्ड तोड़े, बाद में सांप्रदायिक संगठनों की शरण लेकर सत्ता-व्यवस्था को ही गंदा कर दिया। नरसिंह राव तो तांत्रिक गुरु को सबसे बड़ा सलाहकार मानते थे। इसी तांत्रिक ने ललित नारायण मिश्र और केदार पांडेय को लड़ाने और उनके राजनीतिक पतन का इंतजाम करने में अहम भूमिका निभाई थी। इसीलिए राव को निरंतर ऐसी सलाह दी जाती रही कि वह अपनी छाया तक से डरने लगे। उन्होंने न केवल प्रतिपक्ष के नेताओं को षड्यंत्रों से फंसाया, अपने मंत्रिमंडल के विश्वस्त सहयोगियों तक का राजनीतिक जीवन चौपट कर दिया। ऐसी दुष्ट सलाहकार चौकड़ी तो रावण या हिटलर की भी नहीं रही होगी। कम से कम वे उनके साथ अंत समय तक रहे। मजेदार बात यह है कि सत्ता से हटने के बाद नरसिंह राव ने देवेगौड़ा को गुप्त सलाह देने का बीड़ा उठाया और अपनी ही पार्टी के बुजुर्ग नेता सीताराम केसरी को लगभग जेल भिजवाने का इंतजाम कर दिया। ऐसी गलत सलाह से कुछ ही दिनों में देवेगौड़ा का सिंहासन छिन गया। धृतराष्ट्र की तरह पुत्रमोह वाले देवेगौड़ा अब कर्नाटक में कुशासन और भ्रष्टाचार को बढ़ावा देने वाली राजनीति को रंगीन कर रहे हैं। अंधेरनगरी वाला यह राज भी बैसाखियों के बल पर कब तक चलेगा?

**वी.पी. सिंह से अटलजी तक सलाहकार चौकड़ियां सत्ताधारियों को गलत रास्ते पर भटकाती रहीं।**

यूपीए सरकार आने के बाद प्रधानमंत्री कार्यालय में 'अटल राज' शैली में कोई राजनीतिक सलाहकार नहीं रखा गया लेकिन घोषित रूप से एक लंबी-चौड़ी राष्ट्रीय सलाहकार परिषद गठित कर दी गई। दूध या छाछ ही नहीं, मक्खन और घी को भी फूंक-फूंककर ग्रहण करने वाले मनमोहन सिंह संभवतः अब तक सलाह का सही रास्ता तय नहीं कर पाए हैं। इसीलिए इमरजेंसी-राज की तरह कुछ नौकरशाह और कुपित मीडिया विशेषज्ञ उन्हें चमकीला सुनहरा नक्शा दिखाते रहते हैं। इससे पूरे तंत्र में महंगाई बढ़ने से लेकर अपने ही राज्यमंत्रियों के पास काम न होने तक की जानकारी उन्हें सोनिया गांधी के पत्र लिखने से मिलती है। सोनिया जी-जान से सरकार और पार्टी को बचाने की कोशिश करती रहती हैं लेकिन असली सलाहकार परिषद की सलाह कागजों में रह जाती है और विदेशी गेहूं, तेल-दाल, फल-सब्जी तथा हथियारों के आयात से ही देश का भला होने की सलाह देने वालों के हस्ताक्षरों से सरकार की गाड़ी खिंच रही है। नए-पुराने अनुभवों के बाद सत्ताधारी क्या सही सलाहकार, सहायक और कार्यकर्ता तक तलाश नहीं सकते हैं? सिंहासन पर कोई हो, ईमानदार आलोचकों की सशक्त टीम के बिना सत्ताधारी क्या सफल हो सकेगा? ●